मध्य शक्तियों की अनुरूपताः भारत,फ्रांस और परमाणु टैक्नोलॉजी
The Middle Powers' Congruence: India, France, and Nuclear Technology

जयिता सरकार
Jayita Sarkar
June 29, 2015

अप्रैल, 2015 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने योरोपीय देशों में सबसे पहले फ्रांस का ही दौरा किया था. इससे पेरिस के साथ नई दिल्ली के बढ़ते रिश्तों का संकेत मिलता है. भारत ने रक्षा की खरीद के आधार को भी व्यापक बनाने का प्रयास किया और साथ ही शीत युद्ध की अधिकांश अवधि के दौरान समान बिंदुओं पर दोनों देशों की समान विचारधारा पर भी ज़ोर दिया. फ्रांस धीरे-धीरे सभी तीनों रणनीतिक (अर्थात् रक्षा, अंतरिक्ष और परमाणु ऊर्जा) क्षेत्रों में भारत को दुर्जेय टैक्नोलॉजी की सप्लाई करने वाले देश के रूप में उभरकर सामने आया. यद्यपि पेरिस में उपमहाद्वीप में अमरीका के प्रभाव को कम करने या उसका स्थान लेने की कोई महत्वाकांक्षा नहीं है, फिर भी नई दिल्ली रक्षा सप्लाई, अंतरिक्ष टैक्नोलॉजी और परमाणु रिएक्टर की निर्माण योजनाओं के मामले में पेरिस को विश्वसनीय खिलाड़ी मानने लगा है. भारत के विशाल बाज़ार और उन्नत रणनीतिक टैक्नोलॉजी के मामले में भारत की माँग को देखते हुए फ्रांस का भी भारत के प्रति आकर्षण बढ़ता ही रहा है.

भारत- फ्रांस के संबंधों की गतिशीलता से एक ऐसी समानता का पता चलता है, जो उन तमाम मध्य शक्तियों या देशों की विशेषता है "जो अधिकांश छोटे देशों के मुकाबले कहीं अधिक शक्तिशाली हैं, लेकिन महाशक्तियों के मुकाबले कमज़ोर हैं." कार्स्टेन होलब्राड लिखते हैं कि ऐसी समानता से लाभ उठाना आसान नहीं होता और महाशक्तियाँ अक्सर इसका विरोध करने पर तुली रहती हैं. विशेषकर परमाणु टैक्नोलॉजी के क्षेत्र में भारत-फ्रांस संबंधों के इतिहास से स्पष्ट होता है कि शीतयुद्ध से लेकर अब तक इन देशों की नज़दीकियाँ मध्य शक्तियों की समानता का अच्छा उदाहरण तो है, लेकिन अमेरिका परमाणु अप्रसार के उपायों के नाम पर हमेशा ही इनका विरोध करता रहा है. कभी-कभी फ्रैंच सरकार का एक वर्ग और कभी-कभी इसका परमाणु ऊर्जा आयोग भी इसका विरोध करता रहा है.

शीतयुद्ध के आरंभिक दिनों में भारत की परमाणु टैक्नोलॉजी की माँग की पूर्ति फ्रांस द्वारा उस समय भी की गई थी जब ब्रिटेन और अमेरिका ने युद्ध के दौरान परमाणु ऊर्जा संबंधी सूचनाओं पर रोक लगा रखी थी. जनवरी, 1950 में फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) के तत्कालीन अध्यक्ष फ्रैडरिक जोलियट-क्यूरी ने अपनी पत्नी ऐरवाइन के साथ भारत का दौरा किया था और दोनों देशों के बीच तकनीकी सहयोग का मार्ग प्रशस्त किया था, जो न केवल असाधारण था, बल्कि अपने-आपमें अभूतपूर्व भी था. मैनहैटन परियोजना के बाहर यह पहली द्विपक्षीय परमाणु सहयोग करार संबंधी वार्ताओं की शुरुआत थी. 17 जनवरी, 1950 को नई दिल्ली में भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग (AEC) की विशेष बैठक आयोजित की गई, जिसमें जोलियेट-क्यूरी ने युरोनियम के परिष्करण, ग्रेफ़ाइट की रीप्रोसेसिंग और निम्नस्तरीय पावर रिएक्टर के डिज़ाइन के लिए आवश्यक तकनीकी सूचनाओं को साझा करने और इसके बदले में भारत से फ्रांस को अन्य वस्तुओं (जिस पर बाद में विस्तार से खोज की जानी चाहिए) और इनके साथ-साथ थोरियम, बेरिलियम और युरोनियम के निर्यात की पेशकश की गई.

एक ऐसे समय में जब अमेरिका परमाणु टैक्नोलॉजी और तत्संबंधी सूचनाओं पर भारी रोक और नियंत्रण लगाने को उत्सुक हो और युनाइटेड किंगडम और कनाडा भी यही नीति अपना रहे हों, ऐसी पेशकश अकल्पनीय थी. सन् 1951 में भारत में फ्रांस की यह पेशकश अंततः साकार हो गई और दोनों देशों के बीच बेरिलियम से संचालित रिएक्टरों के अनुसंधान और निर्माण के द्विपक्षीय समझौते पर हस्ताक्षर हो गए. इस समझौते के कारण भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग (AEC) पहला विदेशी परमाणु ऊर्जा निकाय बन गया, जिसके साथ फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) ने इतने बड़े पैमाने के समझौते पर हस्ताक्षर किए. यह भी दिलचस्प है कि इसी अवधि के दौरान ही पेरिस और नई दिल्ली के बीच भारतीय उप महाद्वीप में स्थित फ्रांसीसी उपनिवेशों पर भी विवाद चल रहा था. लेकिन फिर भी भारतीय और फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग के बीच निकट सहयोग के कारण परमाणु टैक्नोलॉजी और सामग्री के क्षेत्र में मार्ग प्रशस्त होता रहा और द्विराष्ट्रीय क्षेत्रीय विवाद ने परमाणु ऊर्जा के समझौतों के मार्ग में कोई रोड़ा नहीं अटकाया.

साठ के दशक में दोनों देशों के बीच परमाणु संबंध और गहरे हो गए और इसमें निकट राजनयिक संबंधों के कारण भी और भी मदद मिली और मार्च, 1960 में भारत की प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी और राष्ट्रपति चार्ल्स द गाल की मुलाकात इन संबंधों की साक्षी है. ऐलिसी में आयोजित इस मुलाकात से लगता है कि इंदिरा गाँधी और राष्ट्रपति चार्ल्स द गाल के बीच उस समय के लगभग सभी प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर सहमति हो गई थी. इन मुद्दों में शामिल थे, परमाणु अप्रसार संधि, विएतनाम में अमेरिका का युद्ध और साम्यवादी चीन की भूमिका. जब परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर सन् 1968 में हस्ताक्षर होने लगे थे तब फ्रांस और भारत ने इस संधि पर इस आधार पर हस्ताक्षर करने से इंकार कर दिया था, क्योंकि यह संधि भेदभावपूर्ण थी. सन् 1966 और 1969 के बीच भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग (AEC) और फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) के बीच प्लुटोनियम-आधारित प्लुटोनियम-ब्रीडिंग रिएक्टर टैक्नोलॉजी पर समझौता किया गया, जिसके कारण नई दिल्ली को दो फ्रैंच रिएक्टरों के लिए रिएक्टर का डिज़ाइन मिलने में मदद मिली और साथ ही दक्षिणी फ्रांस स्थित कदाराश में भारतीय कर्मियों को प्रशिक्षण पाने का अवसर मिला. व्यापक अर्थ में देखें तो इस समझौते के कारण ही भारत को कनाडा द्वारा सप्लाई किये गये CIRUS रिएक्टर के लिए उस समय युरेनियम पाने में मदद मिली थी, जिसका इस्तेमाल असैनिक कार्यों के लिए किया जाना था और इसकी रीप्रोसेसिंग ट्रॉम्बे में की गई.

मई, 1974 में भारत ने पहला परमाणु विस्फोट किया, जिसे नई दिल्ली ने "शांति के लिए परमाणु विस्फोट" का नाम दिया. इस विस्फोट में ट्रॉम्बे के CIRUS रिएक्टर के प्लुटोनियम का इस्तेमाल किया गया, जिसके कारण कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और जापान ने नाराज़गी प्रकट की और अमेरिका स्तब्ध रह गया और सोवियत संघ ने कोई प्रतिक्रिया प्रकट नहीं की. फ्रांस की प्रतिक्रिया से भारत को बहुत राहत मिली. फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) ने 23 मई, 1974 को परीक्षण के कई दिनों के बाद भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग (AEC) को इस महान् वैज्ञानिक उपलब्धि के लिए बधाई का तार भेजा. फ्रैंच राजदूत जीन डेनियल जुर्गेन्सन ने नई दिल्ली से लिखा, "भारतीय इस बात को लेकर बहुत प्रसन्न हैं कि फ्रांस ने हर प्रकार के अमैत्रीपूर्ण निर्णय से बचने का प्रयास किया."

फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) के तत्कालीन प्रशासक आंद्रे जिराद ने बधाई संदेश का बचाव करते हुए कहा, "चालीस के दशक से ही भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग (AEC) और फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) के संबंध मैत्रीपूर्ण रहे हैं. यह वह समय था जब कोई भी विदेशी संगठन फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) के साथ सहयोग करने के लिए तैयार नहीं था. इसलिए फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) ने श्री सेठना और उनके सहयोगियों को इस प्रौद्योगिकीय उपलब्धि के लिए बधाई दी है. परमाणु ऊर्जा के दो मैत्रीपूर्ण संगठनों के बीच इन स्थितियों में यह आम बात है. ... "

फ्रांस के नवनिर्वाचित राष्ट्रपति वैलरी गिस्कार डैस्टाँ के नेतृत्व में द ऐलिसी ने सीईए के उल्लास में उऩका साथ नहीं दिया. वह चाहते थे कि भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग (AEC) को अमरीकी नेतृत्व वाले अप्रसार नीति संबंधी प्रयासों के नज़दीक लाया जाए , हालाँकि याक चिराक के नेतृत्व वाले गॉलिस्ट गुट ने देश के भीतर इसका राजनैतिक विरोध भी किया. इसके परिणामस्वरूप PNE के बाद जहाँ एक ओर फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) ने भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग (AEC) को प्रोत्साहित किया, वहीं द क्वे दोर्से ने यह सुनिश्चित करने के लिए भारत के साथ समझौता-वार्ताएँ कीं ताकि फ्रांस द्वारा सप्लाई की गई परमाणु सामग्री और टैक्नोलॉजी का इस्तेमाल भारत द्वारा भावी परमाणु विस्फोट के लिए न किया जा सके.

1974 का परीक्षण भारत के परमाणु कार्यक्रम को बहुत भारी पड़ा. न केवल कनाडा ने सन् 1976 तक परमाणु संबंधी पूरी सहायता वापस ले ली, बल्कि अमेरिका को भी अपने 1978 के परमाणु अप्रसार अधिनियम के कारण तारापुर को तब तक अमरीका द्वारा सप्लाई किये जाने वाले ईंधन को रोकने के लिए बाध्य होना पड़ा जब तक कि भारत पूरी तरह से IAEA के सुरक्षा उपायों को स्वीकार न कर ले. कार्टर के शासन के दौरान तो तारापुर विवाद का मुद्दा ही बना रहा, लेकिन रीगल के शासन-काल में नई दिल्ली के साथ गैर-अमरीकी और गैर-सोवियत ईंधन सप्लायर के ज़रिये मतभेदों को दूर करने के प्रयास शुरू कर दिये गये. इसके परिणामस्वरूप अमरीका ने अंततः फ्रांस को तीसरी पार्टी के रूप में ईंधन सप्लाई करने की अनुमति दे दी. सन् 1983 में फ्रांस के स्थान पर अमरीका ने तारापुर रिएक्टर को ईंधन सप्लाई करना शुरू कर दिया. इस निर्णय का भारतीय मीडिया ने बहुत उत्साह के साथ स्वागत किया और भारत के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम को उबारने के लिए पेरिस की प्रशंसा की और अनुचित ढंग से अड़ंगे लगाने और "नव-उपनिवेशवाद" के लिए वाशिंगटन की आलोचना की.

सन् 1992 में परमाणु अप्रसार संधि पर फ्रांस द्वारा हस्ताक्षर किये जाने के बाद भी तारापुर रिएक्टर की ईंधन सप्लाई में फिर से बाधा आ गई, लेकिन भारत-फ्रांस परमाणु नज़दीकियों के दिन अब अभी-भी खत्म नहीं हुए थे. जनवरी, 1998 में फ्रांस के राष्ट्रपति याक चिराक ने एक उच्च-स्तरीय शिष्टमंडल के साथ भारत का दौरा किया. इस शिष्टमंडल में फ़ैमाटोन (अब AREVA) के मुख्य कार्यपालक अधिकारी (CEO) भी शामिल थे. सन् 1998 में भारत के परमाणु परीक्षण के बाद चिराक ने सार्वजनिक तौर पर भारत का समर्थन किया था और अमरीकी पाबंदियों का विरोध भी किया था. एक बार फिर पेरिस ने भारत का समर्थन किया और वाशिंगटन ने 1974 की तरह ही भारत पर पाबंदियाँ लगा दीं.

सितंबर, 2008 में परमाणु सप्लायर ग्रुप (NSG) द्वारा भारत को असैन्य परमाणु व्यापार करने की छूट देने के कुछ समय बाद फ्रांस वह पहला देश था, जिसने भारत के साथ असैन्य परमाणु समझौते पर हस्ताक्षर किये और यह समझौता अमरीकी सीनेट द्वारा अमरीका-भारत असैन्य परमाणु समझौते के अनुमोदन से पहले ही संपन्न हो गया था. उसके बाद जब परमाणु सप्लायर ग्रुप (NSG) ने घोषणा की कि वह उन देशों को परमाणु ईंधन एनरिच और रीप्रोसेस करने की टैक्नोलॉजी सप्लाई नहीं करेगा, जिन्होंने परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं, तो फ्रांस ने घोषणा कर दी कि परमाणु सप्लायर ग्रुप (NSG) की यह घोषणा भारत के साथ किये गये द्विपक्षीय परमाणु सहयोग पर लागू नहीं होगी. दूसरे शब्दों में, जब अमरीका परमाणु सप्लायर ग्रुप (NSG) द्वारा दी गई छूट को लागू करने के लिए अनेक तरह की पहल कर ही रहा था तब लगता है कि फ्रैंच कंपनियाँ भारत के परमाणु बाज़ार पर अपना नियंत्रण करने के लिए अमरीकी कंपनियों से कहीं आगे बढ़ गई थीं. परमाणु देयता पर नई दिल्ली और वाशिंगटन के बीच हुए समझौते के दौरान हाल ही में दिये गये पुनः आश्वासनों के बावजूद वैस्टिंगहाउस और जनरल इलैक्ट्रिक जैसी अमरीकी कंपनियों की भारत के परमाणु ऊर्जा बाज़ार में निवेश की संभावना कम ही लगती है. दूसरे शब्दों में, भारत और फ्रांस के बीच मध्य शक्तियों की अनुरूपता ने शीतयुद्ध को तो झेल ही लिया था और यह भावना अब और भी मज़बूत होती जा रही है.

नई दिल्ली और पेरिस के बीच मध्य शक्तियों की अनुरूपता का दायरा इस कारण से भी बढ़ रहा है कि फ्रांस ने योरोप के बाहर के परमाणु टैक्नोलॉजी के भागीदारों के साथ उस टैक्नोलॉजी का व्यापार करने का मन बना लिया है जहाँ अभी यह भी सिद्ध नहीं हुआ है कि यह टैक्नोलॉजी अर्थक्षम भी है या नहीं. शीतयुद्ध के अधिकांश समय में परमाणु संबंधी सुरक्षा उपायों के संबंध में फ्रैंच उदासीनता के कारण वाशिंगटन के साथ विदेश नीति को लेकर मतभेद भी बढ़े, लेकिन भारतीय और फ्रैंच भौतिकविज्ञानियों के बीच संबंध गहरे होते चले गए. भारत की दृष्टि से फ्रैंच परमाणु ऊर्जा आयोग (CEA) ने सन् 1974 में उस समय भी जब कोई भी परमाणु ऊर्जा आयोग भारत की मदद के लिए तैयार नहीं था, न केवल प्रौद्योगिकीय मदद की, बल्कि सक्रिय रूप में प्रोत्साहन भी दिया. भारत और फ्रांस के बीच अधिकांशतः परमाणु सहयोग उन क्षेत्रों में था, जिनमें बेरिलियम और ब्रीडर रिएक्टर जैसी उस समय की बिना परीक्षण की गई प्रौद्योगिकियाँ शामिल थीं. इसलिए भारत को द्विपक्षीय सहयोग के माध्यम से संयुक्त अनुसंधान करने और सीखने का अवसर भी मिला. अन्यथा नई दिल्ली को 1963 के तारापुर के लिए अमरीकी-भारत करार जैसी तैयारशुदा परियोजनाओं से तकनीकी जानकारी मिलने की बहुत कम संभावनाएँ रहती हैं. फिर भी साधनों की भिन्नता के बावजूद नई दिल्ली को ''लगभग बराबरी'' के आधार पर पेरिस के साथ सहयोग करने का अवसर मिला. ''नव-उपनिवेशवादी शोषण'' का कभी कोई खतरा नहीं रहा. फ्रांस के रूप में भारत को ऐसा सहयोगी मिला, जिसमें सहानुभूति और सहयोग की भी भावना थी. सौभाग्यवश, यह भावना अभी भी कायम है.

जयिता सरकार हार्वर्ड विश्वविद्यालय के जॉन एफ़ कैनेडी सरकारी स्कूल में विज्ञान और अंतर्राष्ट्रीय मामलों के बैल्फेर केंद्र में स्टैंटन परमाणु सुरक्षा फ़ैलो हैं और कोलंबिया विश्वविद्यालय के सल्त्ज़मान युद्ध व शांति अध्ययन संस्थान में विज़िटिंग स्कॉलर भी हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार <malhotravk@gmail.com> / मोबाइल : 91+9910029919